International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, January-June 2024, Submitted in January 2024, ISSN -2393-8048

भारत के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में पुनर्जागरण काल : एक विवेचना

सुनील कुमार तिवारी, शोधार्थी, इतिहास विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय, अलवर (राजस्थान)
डॉ. अवनीश कुमार मिश्र, सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय, अलवर (राजस्थान)

शोध सारांश

जब देश गुलामी की जंजीरों से जकड़ा हुआ था और समस्त जनजीवन अंधविश्वास, रुढ़िवादिता एवं अज्ञान की आंधी में अटका हुआ था। वस्तुतः धार्मिक–सामाजिक सुधार आंदोलनों के सम्मिलित प्रभाव से राजनीतिक जीवन में सुधार एवं परिवर्तन की जरूरत महसूस होने लगी। विवेकानन्द, अरविंद घोष और बाद में गाँधी जैसे व्यक्तियों ने धीरे–धीरे परिवर्तन के मार्ग को प्रशस्त किया, जिससे राष्ट्रीयता एक नए विचार के रुप में पल्लवित हुई।

सूचक शब्द (Key words) भारत, पुनर्जागरण, काल, विवेचना

इतिहासकारों के बीच में सामान्य रूप से इस विषय पर कोई सहमति नहीं है कि कौन–सी तारीख या घटना आधुनिक इतिहास को मध्यकालीन इतिहास से और समकालीन इतिहास को आधुनिक इतिहास से अलग करती है। इस बात का निर्धारण करना कि आधुनिक इतिहास वास्तव में कब से शुरू हुआ मात्र सुविधा पर निर्भर करता है। आमतौर पर आधुनिक इतिहास उन गतिविधियों तथा रीतिरिवाजों की उपस्थिति से संबंध रखता है, जो हमें आज प्राचीन के मुकाबले अधिक परिचित प्रतीत होती है। इतिहासकार आमतौर पर इस बात से सहमत है कि 14वीं से 16वीं शताब्दी तक यूरोप अपने राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक ढाँचे में ऐसे परिवर्तन देखता रहा, जिन्हें हम आधुनिक काल का आरंभ करने वाला कह सकते हैं।

अंग्रेजी भाषा में रिनेसा (Renaissance पुनर्जागरण) शब्द का अर्थ है–पुनर्जन्म। पर इससे किसी प्रकार के पुनर्जन्म का बोध नहीं होता है, क्योंकि मध्यकाल में शास्त्रीय पांडित्य का कोई अंत नहीं हुआ था। वस्तुतः पुनर्जागरण या नवजागरण (रेनेसाँ) मूलतः यूरोपीय इतिहास से ग्रहीत अभारतीय अवधारणा है, जिसका प्रयोग और विकास 19वीं शती के भारत में इसकी ऐतिहासिक साँस्कृतिक विरासत और चिंतन के अनुरूप पर्याप्त एवं पृथक रूप में हुआ है। हिन्दी में पुनर्जागरण के किए अनेक समानार्थी शब्द 'नवजागरण', 'पुनरुत्थान', 'नवोत्थान', 'पुनरूज्जीवन', 'नवजीवन', 'नवयुग' तथा 'नवजाग्रति', आदि प्रचलित रहे है। किन्तु आधुनिक सन्दर्भ में पुनर्जागरण का प्रयोग अंग्रेजी के रेनेसाँ (Renaissance) शब्द के पर्याय के रूप में रूढ़ हो गया है। रेनेसाँ फ्रांसीसी शब्द रेनायत्रे (Renaitra) से लिया गया

मूलतः इन अंग्रेजी, फ्रांसीसी शब्दों की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के 'रेनासोर' (त्मदेंबवतप) शब्द से हुई है, जिसका लैटिन भाषा में अर्थ होता है– पुनर्जन्म या पुनर्जागरण। इटैलियन भाषा में भी 'रेनेसाँ' को कला और विज्ञान का पुनर्जागरण या 'रिनेसिमेंटो' (Rinascmento) कहा गया है।

नवजागरण, संस्कृत भाषा का नव–उपसर्ग जागृ धातु में ल्युट प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ है "जागते रहने की अवस्था या भाव" लाक्षणिक अर्थ में जागरण' वह अवस्था है जिसमें किसी जाति, देश, समाज आदि को अपनी वास्तविक परिस्थितयों और उनके कारणों का व्यक्ति को ज्ञान हो जाता है और वह जाति व्यक्ति, समुदाय, राष्ट्र, राज्य अपनी प्रतिरक्षा एवं उन्नति के लिए बौद्धिक, सामाजिक, आर्थिक रूप से सचेष्ठ हो जाता है।[1] नवजागरण (रेनेसाँ) मानव या राष्ट्र की आत्मा, मन–मस्तिष्क की चैतन्यावस्था का प्रतीक है। यह मानव जीवन और विचार जगत की समस्त गतिविधियों में नवचेतना, नवस्फूर्ति और नवजीवनशक्ति का स्पंदन है।

पुनर्जागरण (रेनेसाँ) :

विविध अर्थ, परिभाषा एवं सोपान आधुनिक संदर्भ और अर्थ में 'रेनेसाँ' शब्द का प्रयोग संभवतः पहली बार बाल्जाक ने 1829 ई0 में अपनी नाट्य कृति (Balde sceau) में किया था। इस शब्द को आधुनिक स्वरूप 19वीं शती के जुलियस मैशला, जॉन एडिक्टन साइमंड (1840–93) तथा मुख्यतः जेकोब बुकहाट (Jakab Burekhardt) आदि ने प्रदान किया था।

यूरोप में 15वीं शती के अन्त और 16वीं शती के प्रारम्भ तक पुनर्जागरण का परम्परागत अर्थ 'लैटिन–ग्रीक साहित्य एवं कला के पुनर्जन्म' तक सीमित था और यह विश्वास किया जाता था कि लैटिन ग्रीक जीवन तथा ज्ञान ही सच्ची संस्कृति का उद्गम है। किन्तु आधुनिक इतिहास पुनर्जागरण (रेनेसॉ) का अर्थ ग्रीक–लैटिन साहित्य एवं कला का प्रत्यावर्तन (Revival of & learning) मात्र ही नहीं करते हैं, बल्कि वे इसे रेनसाँ का केवल एक लक्षण मानते हैं।'

चितंनधारा में वैचारिक ऐतिहासिक प्रक्रिया का आन्दोलन था। जान एंडिक्टन साइमंड के शब्दों में "रेनेसाँ को यूरोपीय प्रज्ञा के सर्वांगपूर्ण आन्दोलन के अर्थ में समझा जाएगा जो आत्मिक मुक्ति लाने वाला विवेक और इन्द्रिय ज्ञान के सहज अधिकारों में पुनः विश्वास प्रस्थापित करने वाला, मानव के निवास स्थान के रूप में इस नक्षत्र पर विजय प्राप्त करने वाला तथा व्यक्ति और राज्य दोनों के लिए सैद्धान्तिक नियमों का निर्माण करने वाला है, जिसका स्वरूप युग के नियमों से भिन्न है।''

कतिपय आधुनिक इतिहासकारों का अभिमत है कि रेनसाँ आधुनिक युग और मध्य युग के बीच का संक्रांति काल है। हेनरी एस0 लुकास ने इसके आधुनिक अर्थबोध को परिभाषित करते हुए कहा है कि)– रेनेसाँ 1300 ई0 के मध्य में प्राप्त यूरोपीय समाज की उन साँस्कृतिक उपलब्धियों को दर्शाता है जो आधुनिक और मध्य युग के बीच का संक्रमण काल कहलाता है।[2] इसमें न केवल कला, संगीत, साहित्य और विज्ञान के क्षेत्र में महत्तर लक्ष्य प्राप्त किए, वरन् जीवन के आर्थिक आधार, समाज के ढाँचे और राज्यों की व्यवस्था में दूरगामी परिवर्तन हुए।" प्रो0 हेग ने पुनर्जागरण को जीवनशैली में परिवर्तन प्रक्रिया माना है।''

संक्षेपतः यूरोपीय रेनसाँ सर्वांग माननीय ज्ञान–सम्पदा, सर्जनात्मक कला शक्तियाँ एवं बहुमुखी वैज्ञानिक उपलब्धियों का बीजवपन काल था। वस्तुतः यह मध्ययुग से आधुनिक काल में पदार्पण का काल था। इसी प्रकार महान इतिहासकार वालेस के0 फर्गुएसन ने अपनी पुस्तक A Survey of European-Civilization में लिखते है कि रेनेसाँ

काल को अव्यवस्थित परिवर्तनों का युग परिभाषित किया जा सके, जिसमें काफी कुछ अभी भी मध्ययुगीन था, तो काफी कुछ में आधुनिक मूल्यों का समावेश था और काफी हद तक विलक्षण थी। यह मध्ययुग और आधुनिक युग था, जिसकी अपनी पहचान थी, क्योंकि यह काल राजनीतिक, सामाजिक और बौद्धिक उत्तेजनाओं से पूर्ण था।"

पुनर्जागरण : भारतीय सन्दर्भ :

यूरोप की 14वीं शती के समान भारत में 19वीं शताब्दी को भी साँस्कृतिक संक्रमण काल की शती कही जा सकती है, जिसमें मध्ययुगीन जीवन के आदर्श तो विद्यमान थे, किन्तु साथ में इस नवयुग में जनमानस नव–चेतना तथा नव–वैचारिक उद्वेलन का अनुभव करने लगा था, परिणामस्वरूप परम्परागत एवं आध पुनिक विचार का अन्तर्द्वन्द जीवन, धर्म, दर्शन, साहित्य, कला, पत्रकारिता आदि सभी विधाओं में प्रतिफलित, प्रस्फुटित होने लगा था।

भारतीय विचारकों ने 19वीं शती के भारत के सामाजिक–साँस्कृतिक रूपान्तरण, पुनरुत्थान, पुनर्जीवन तथा नवचिंतन, नवविकास को 'भारतीय नव–जागरण के नाम से अभिहित किया है। डा0 शिवदान सिंह चौहान हिन्दी 'गद्य साहित्य के इतिहास' में लिखते हैं कि "राष्ट्रीय जागरण से तात्पर्य अपने राष्ट्रीय अस्तित्त्व और एकता की साम्राज्य विरोधी राजनीतिक चेतना या भावना का उत्पन्न हो जाना मात्र नहीं, इससे केवल समझ लेना इसके अर्थ को संकुचित कर देना है। हमारे राष्ट्रीय जागरण से मिलती–जुलती किन्तु भिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों में एक धारा यूरोप के देशों में कई एक शताब्दियाँ पहले ही प्रवाहित हो चुकी है। अंग्रेजी में इस धारा को 'रेनेसाँ' कहते हैं, जिसका इतिहास में गूढ़ अर्थ साँस्कृतिक पुनर्जागरण है।" वस्तुतः भारतीय पुनर्जागरण यूरोपीय सभ्यता और आंग्ल औपनिवेशिक शासन के राजनीतिक प्रभुत्व के घात–प्रतिघात से उत्पन्न जनआन्दोलन था। श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' इसे 'नव–मानवतावाद' के आंदोलन की संज्ञा देते है "पुनरुत्थान से मेरा तात्पर्य उस वैचारिक आन्दोलन से है जो भारत और यूरोप के सम्पर्क के साथ आरम्भ हुआ था और जो कदाचित आज भी चल रहा है। यह आन्दोलन भारत में नई मानवता के जन्म का आन्दोलन है एवं उसके प्रवाह के साथ केवल यूरोपीय विचार ही भारत में नहीं आ रहे हैं, बल्कि इस देश के बहुत से प्राचीन विचार भी नवीनता प्राप्त कर रहे हैं। पौराणिक कथाओं पर इस आन्दोलन ने अपनी आभा बिखेरी है और इसके आलोक में हमारे इतिहास की अनेक घटनाएं एवं नायक नई ज्योति से जगमगाने लगे हैं।'' इस कथन में पुरातनता के पुनरुत्थान की ओर संकेत किया गया है, किन्तु पुरातन मूल्यों की पुनर्स्थापना आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में ही होनी चाहिए। प्रसिद्ध विद्वान एवं कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में लिखा है कि "जो भी व्यक्ति आज के सत्य को अनादृत करके भूतकाल की भरी हुई बातों को दुहराता है, उसे हम पुनर्जागरणवादी या रिवाइवलिस्ट कहते हैं– किन्तु, नवोत्थान में भी अतीत की बाते दुहराई जाती है। जब नवोत्थान का समय आता है, जातियों के कुछ पुरातन सत्य दुबारा जन्म लेते हैं, यह पुनर्जागरण नहीं, सत्यों का पुनर्जन्म है।"

पुनर्जागरण वस्तुतः पुनर्जन्म है और पुनर्जन्म, न केवल बुद्धि से, न पूर्ण आर्थिक समृद्धि से, न ही नीति या सिद्धान्त से या न प्रशासनिक परिवर्तन से होता है। वह तो नया हृदय प्राप्त करने, त्याग की अग्नि में अपना सर्वस्व होम करने और माँ के गर्भ में पुनः जन्म लेने से होता है। . नव–जागरण की अवधारणा में मानवता, मनभस्तिष्क, संस्कृति–सभ्यता, भाव भाषा, जीवनशैली और जन–दृष्टिकोण में वैचारिक अभिनवीकरण तथा बदलाव का भाव या प्रक्रिया विधि होती है। इसमें नया आत्म विश्वास, नया दृष्टिकोण, नयी अन्तर्दृष्टि, नयी रचनात्मक दिशाएं स्वतः प्रस्फुटित–जागरित होने लगती है। डा0 देवराज पथिक की धारणा है "वस्तुतः जब कभी भी समाज अथवा राष्ट्र की परम्परागत मूल धारणा निर्बल पड़ जाती है और किसी नयी विचारधारा को कोई समाज अथवा राष्ट्र ग्रहण करता है और वह विचारधारा किसी निश्चित लक्ष्य अथवा ध्येय के आलोक में आगे बढ़ती है तो राष्ट्रीयता की भावना जागृत होती है। इसी जागृति को पुनर्जागरण के नाम से संबोधित किया जाता है। संक्षेपतः यूरोपीय एवं भारतीय परिभाषाओं और स्थापनाओं के आलोक में कहा जा सकता है कि पुनर्जागरण का अर्थ "ऐतिहासिक काल–चेतना'' और 'विचार' दोनों अर्थो में लिया जा सकता है और पुनर्जागरण का अर्थ एवं अवधारणा दोनों, देश, काल और परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तित होते रहे हैं। स्पष्टतः कहा जा सकता है कि पुनर्जागरण की प्रक्रिया सर्वव्यापी, बहुमुखी एवं बहुआयामी होती है।[3] इस आधुनिक नवचेतना ने न केवल यूरोप को, बल्कि भारत में नये समाज, नये जीवन, नये राष्ट्रीय भावना का संचार किया। वस्तुतः यह

19वीं शती का भारतीय पुनर्जागरण ही था, जिसने सदियों से भारतीय समाज की जड़ता, अंधविश्वास, कुरीतियों की ओर ध्यान आकर्षित किया और उन प्राचीन मूल्यों की स्थापना पर बल दिया जो वैदिक साहित्य, उपनिषदों, पुराणों में भरा पड़ा था।

भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना के उपरांत देश में अंग्रेजी सभ्यता एवं संस्कृति के प्रसार हेतु सुनियोजित प्रयास किये गए। अंग्रेजी सभ्यता एवं संस्कृति के फलस्वरूप दो विषम परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई। पहली पश्चिम की आधुनिक संस्कृति के भारत पर प्रभाव से अवतरित हुई। दूसरी इस संपर्क के विरूद्ध भारतीय जनमानस की प्रतिक्रिया से हुई। बहुत हद तक इन दोनों शक्तियों के सम्मिलित प्रभाव से 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारत के सामाजिक एवं साँस्कृतिक जीवन में एक ऐसे आन्दोलन का श्री गणेश हुआ, जिसे कुछ विद्वानों ने भारतीय पुनर्जागरण (Indian Renaissence) के नाम से पुकारा है।

भारत पर अंग्रेजों की विजय ने भारतीय समाज की कमजोरी एवं अवनति को उभार कर सामने रख दिया। चिंतनशील भारतीयों ने अपने समाज की दुर्दशा, पिछड़ेपन और विदेशियों के समक्ष अपनी पराजय के कारणों की अनुशीलन शुरू की। यद्यपि बड़ी संख्या में भारतीयों ने पश्चिम के साथ समझौता करने से इन्कार कर दिया और उन्होंने परम्परागत भारतीय विचारों और संस्थाओं में अपनी आस्था बनाए रखी, तथापि अन्य लोगों ने . धीरे–धीरे स्वीकार किया कि आधुनिक पाश्चात्य चिन्तन ने उनके। समाज के पुनरुद्धार की कुंजी प्रदान की है। ये भारतीय परिचय के वैज्ञानिक ज्ञान, बुद्धिवाद, मानवतावाद के सिद्धान्तों से प्रभावित थे। इस प्रकार बौद्धिक स्तर पर भारतीय आस्था और दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया और धर्म और समाज के क्षेत्र में सुधार का युग आरम्भ हो गया।

पुनर्जागरण लाने में उन कतिपय यूरोपीय विद्वानों का भी हाथ था जो भारत की प्राचीन सांस्कृतिक उपलब्धियों से प्रभावित थे। वे चाहते थे कि भारत का वह गौरवमय अतीत पुनः वापस आए और भारत का सामाजिक एवं

International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, January-June 2024, Submitted in January 2024, ISSN -2393-8048

साँस्कृतिक विकास हो। उदाहरणार्थ जर्मन विद्वानों में शोलिंग, काण्ट, शिलर, पिरोल, बांटलिंग, पालडयूसन आदि का उपनिषदों पर तथा लुदाविग, बेवर, आर0 पिशेल आदि का यजुर्वेद आदि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा। मैक्समूलर ने 1849—1875 तक सायण भाष्य सहित ऋग्वेद को 6 जिल्दों में संपादित करने प्रकाशित कराया तथा 'हितोपदेश', 'मेघदूत', 'धम्मपद' तथा 'उपनिषद' आदि का अनुवाद का कार्य किया। जेम्स फर्गुसन 1843 में अज्ञात पुरातत्त्व सामग्री प्रकाश में लाये।

जी0 बूलर (1837—1898) ने 'दशकुमारचरित' विक्रमांकदेवचरित, 'पंचतंत्र', का संपादन तथा इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डोआर्यन रिसर्च' का प्रणयन किया। फ्रांसीसी विद्वानों में यूजेन बनीफ़ ने महायान बौद्धग्रंथ 'सद्धर्मपुण्डरीक' का अनुवाद किया। बॉय ने 1816 में संस्कृत भाषा—विज्ञान, व्याकरण तथा कोशग्रंथ का निर्माण किया। अमेरिकी प्राच्य विद्या प्रेमी विलियम हिहइटनी (1827—1984) ने अथर्ववेद पर भाष्य तैयार किया तथा संस्कृत ग्रामर पर प्रौढ़ ग्रन्थ की रचना की। आंग्ल विद्वानों में सर विलियम जोन्स ने 1774 ई0 में 'एशियाटिक सोसाइटी' की स्थापना कर संस्कृत के हस्तलिखित ग्रंथों का पुनरुद्धार किया। जोन्स ने 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' (1779), 'मनुस्मति' (1792), 'ऋतुसंहार' का अंग्रेजी में अनुवाद प्रस्तुत किया। अन्य आंग्ल विद्वानों में हेनरी टामस कोलब्रक (1768—1837), अलेक्जेंडर हैं। मिल्टन आदि ने भारतीय धर्मशास्त्र, ज्योतिष, बौद्धिक संस्कृति पर जोशपूर्ण लेख लिखे, किन्तु ये सभी कार्य विदेशी भाषाओं में हुए हैं।

पाश्चात्य इतिहास, साहित्य, दर्शन, संस्कृति और सभ्यता की उच्चता को देखकर भारतीय अपने आपको हीन समझने लगे। किन्तु बुद्धिजीवियों का एक वर्ग आत्महीनता के इस दबाव को दूर करने के लिए तात्कालीन पत्र—पत्रिकाओं में, श्रेष्ठ ग्रंथों तथा विभिन्न भाषाओं यथा हिन्दी, मराठी, बंगला, तेलगू, कन्नण, तमिल आदि में भाषान्तर एवं पनाख्या प्रकाशित की। बाल गंगाधर तिलक ने 'गीतारहस्य' एवं 'कर्मयोगशास्त्र' ग्रंथ का प्रणयन किया। अनेक प्राच्य विद्या के अनुसंधान—अनुवाद कार्यों के फलस्वरूप परतन्त्र भारतीयों में खोज, आत्मविश्वास, शक्ति तथा आत्म—गौरव पुनः जागृत हुआ। फलस्वरूप राष्ट्रीयता को नया आयाम मिला। केएम0 पणिक्कर के शब्दों में "बीसवीं शती के प्रथम दशक तक राष्ट्रीयता का एक नया स्वरूप निखार। ऐसा मुख्यतः यूरोपीय विद्वानों के कार्यों का प्रतिफल था और हिन्द समझ गए कि हमने संसार के दर्शन में योग दिया है।"

इसके अलावा 19वीं शती में भारत में धार्मिक, सामाजिक सुधार की जिस प्रक्रिया की शुरूवात हुई थी, उनमें मुख्य भूमिका ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, थियोसिफिकल सोसाइटी, पूना सार्वजनिक सभा (1870), रामकृष्ण मिशन आदि की थी।

ब्रह्म—समाज एवं राजा राममोहन राय :

आधनिक नवजागरण के जन्मदाता राजा राममोहन राय (1774—1833 ई0) थे। राजा राममोहन राय ने ही आधुनिक भारत में पूर्वी बंगाल से धार्मिक सुधार आन्दोलन का सूत्रपात किया। इसी कारण राय को भारत के नवजागरण का अग्रदूत, सुधार आन्दोलनों का प्रवर्तक एवं आधुनिक भारत का पहला महान नेता माना जाता है। 1814 ई0 में राममोहन कलकत्ता में अपने युवा समर्थकों के साथ 'आत्मीय सभा' की स्थापना की। अपने विशद् ज्ञान और वैज्ञानिक एवं प्रगतिशील दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि में हिन्दू धर्म में उत्पन्न कुरुतियों एवं आडंबरों पर गंभीर प्रहार किया। उन्होंने मूर्ति पूजा की आलोचना की और सप्रमाण प्रस्तुत किया कि प्राचीन भारतीय धर्मशास्त्रों में एक ही ब्रह्म का उपदेश निहित है। अपने दावे को प्रमाणित करने के लिए उन्होंने वेदों और पाँच प्रमुख उपनिषदों के बंगला अनुवाद प्रकाशित किए। 1820 ई0 'प्रीसेप्टस आफ जीसस' नामक पुस्तिका प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने न्यूटेस्टामेण्ट के नैतिक और दार्शनिक संदेशों को अलग किया। उन्होंने 1829 ई0 में एक नयी धार्मिक संस्था 'ब्रह्मसभा' की स्थापना की, जिसको बाद में 'ब्रह्मसमाज' कहा गया। इसका उद्देश्य हिन्दू धर्म को स्वच्छ बनाना तथा एकेश्वरवाद की शिक्षा देना था। समाज सुधार के कार्यक्रमों में उन्होंने सती प्रथा, बाल विवाह, कन्या विक्रय तथा जाति प्रथा के विरूद्ध संघर्ष अभियान छेड़ा तथा नारी स्वातंत्र्य के समर्थन में नारी का संपत्ति पर अधिकार स्वीकार किया।[4] राममोहन राय राष्ट्रीय पत्रकारिता के जनक भी माने जाते हैं। उन्होंने अनेक पत्र पत्रिकाओं की स्थापना की। कवि रवींन्द्रनाथ ठाकुर ने ठीक ही लिखा है कि "राम मोहन राय अपने समय में सम्पूर्ण मानव समाज में एक मात्र व्यक्ति थे, जिन्होंने आधुनिक युग के महत्त्व को पूरी तरह समझा।"

प्रार्थना समाज :

केशव चन्द्र सेन की देखरेख में बम्बई में प्रार्थना समाज (1867) की स्थापना हुई। जस्टिस एम०जी० रानाडे, आर0जी0 भण्डारकर. आत्मारंग पाण्डरंग आदि सधारकों ने इसे पश्चिम भारत में महत्त्व दिलाया। प्रार्थना समाज ने हिन्दू धर्म में जाँत—पाँत, अछूत, नारी दशा सुधारने के अनेक कार्यक्रम चलाए।

आर्य समाज

उत्तरी भारत में हिन्दू धर्म और समाज में सुधार का काम आर्य समाज ने किया। आर्य समाज की स्थापना स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 ई0 बंबई में की। निरंतरता और प्रभाव की दृष्टि से यह आन्दोलन अपने समय में और आन्दोलनों की अपेक्षा ज्यादा लोकप्रिय था। आर्य समाज के अनुसार ईश्वर के सच्चे स्वरूप का ज्ञान वेदों में है। उन्होंने 'वेदों की ओर लौटो' का नारा दिया। ईश्वर एक सक्रिय सर्जनात्मक शक्ति का नियंता है। वे भ्रमातीत और अमोघ है। ये सर्वसम्मत ज्ञान—विज्ञान और विकास के अविरल स्रोत है। वेदों के पठन—पाठन का अधिकार सबको है।

आर्य समाज धार्मिक सामाजिक सुधार कार्यों में राष्ट्रीय जागरण की उत्कट राष्ट्रीयता, देश प्रेम की भावना से युक्त था। स्वामी दयानंद सरस्वती ने ही सर्वप्रथम 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। उन्होंने राष्ट्रीय एकता, अस्मिता, गौरव चेतना का उत्थान कर, भारतीयों को समन्वित चेतित करने का प्रयास किया। आर्य समाज के राजनीतिक महत्व को प्रतिपादित करते हुए एण्डे० रीनकोर्ट का कथन अत्युक्तिपूर्ण नहीं है—"आज इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि 1905 का बंगाल का महान विद्रोह परोक्ष रूप से आर्य समाज की धार्मिक राष्ट्रीयता का ही परिणाम था और महर्षि दयानंद का संगठन राजनीतिक राष्ट्रीयता का प्रथम मूर्त केन्द्रबिन्दु था।"

रामकृष्ण मिशन :

दक्षिणेश्वर (कलकत्ता) के काली मंदिर के पुजारी रामकृष्ण परमहंस (1834—86) के उपदेशों ने रामकृष्ण आन्दोलन की पृष्ठिभूमि तैयार की। उन्होंने धर्म के सरल, सहज, शुद्धतम सर्वग्राह्य रूप को अपने आचरण द्वारा प्रस्तुत करके बताया कि सभी धर्म एक ही ईश्वर की ओर ले जाने वाले मार्ग हैं। मूल तत्त्व एक है, साधन अनेक है। उन्होंने मुक्ति पाने का सबसे सरल, सहज ढंग मानव सेवा को बतलाया। क्योंकि मानव ईश्वर का मूर्तरूप है, इसलिए मानव सेवा ही ईश्वर की सच्ची सेवा है। परमहंस के शिष्य विवेकानंद (1862) ने 1893 ई0 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की एवं इस मिशन के उद्देश्यों को उन्होंने विश्व के धर्म मंच पर भारतीय अध्यात्म ज्ञान तथा हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता का प्रस्तुतीकरण से किया। यह विचारधारा आध यात्मिक, भौतिक, पूर्व—पश्चिम, के श्रेष्ठ चिंतन संयुक्त उदात्त धर्म, लोक सेवा तथा राष्ट्रभक्ति की भावना से पूर्ण थी। उन्होंने धर्म की पुनर्व्याख्या कर उसे समाजोपयोगी तथा सार्थक बनाया। ये धार्मिक—सामाजिक आन्दोलन भारतीय आत्मा को प्रबुद्ध करने और साम्राज्यवाद की नींव हिलाने से महत्वपूर्ण स्रोत सिद्ध हुए।

निष्कर्ष :

समग्रतः आन्दोलन ने भारतीयों को समानता, स्वतंत्रता, जागरण का संदेश ऐसे समय पर दिया, जब देश गुलामी की जंजीरों से जकड़ा हुआ था और समस्त जनजीवन अंधविश्वास, रूढ़िवादिता एवं अज्ञान की आंधी में अटका हुआ था। वस्तुतः धार्मिक—सामाजिक सुधार आन्दोलनों के सम्मिलित प्रभाव से राजनीतिक जीवन में सुधार एवं परिवर्तन की जरूरत महसूस होने लगी। विवेकानन्द, अरविंद घोष और बाद मे गाँधी जैसे व्यक्तियों ने धीरे—धीरे परिवर्तन के मार्ग को प्रशस्त किया, जिससे राष्ट्रीयता एक नये धर्म के रूप में अवतरित हुई।

❖ शोधार्थी इतिहास, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर

सन्दर्भ :

1. भट्ट, गौरी शंकर, भारतीय नवजागरण प्रणेता और आन्दोलन, चौखम्बा प्रकाशन, इलाहावाद, 1969
2. देसाई, ए0आर0, भारतीय राष्ट्रवाद का सामाजिक पृष्ठभूमि, मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
3. पाण्डे, विजय कुमार, भारतीय संस्कृति एवं कला, साहित्य संगम, इलाहाबाद, 2004
4. रानीबल, मीरा, राष्ट्रीय नवजागरण एवं हिन्दी पत्रकारिता, वाणी प्रकाशन, 2004